दैनिक जागरण
शब्दों की शक्ति बिगड़ा काम भी बना सकती है

# अमेरिका-ईरान का टकराव

अमेरिका ने ईरान के शीर्ष सैन्य अधिकारी मेजर जनरल कासिम सुलेमानी को निशाना बनाकर एक बार फिर पश्चिम एशिया को अशांति के मुहाने पर ला खड़ा करने का काम किया है। सुलेमानी की हत्या के बाद ईरान जिस तरह बदले की आग से भरा हुआ है और अमेरिका को सबक सिखाने की धमकी दे रहा है उसके नतीजे अच्छे नहीं होंगे। इन संभावित नतीजों से केवल पश्चिम एशिया ही नहीं, बल्कि पूरी दुनिया आशंकित है। इसका एक बड़ा कारण यही है कि यह वह क्षेत्र है जो विश्व की तेल जरूरतों को पूरा करता है। साफ है कि अमेरिकी राष्ट्रपति ने पूरी दुनिया के लिए समस्या खड़ी कर दी है। इससे इन्कार नहीं कि सुलेमानी पश्चिम एशिया में अमेरिकी प्रभाव के खिलाफ हर तरह से सक्रिय थे और वह दुनिया के विभिन्न हिस्सों में फैले कई अतिवादी एवं आतंकी गुटों की मदद भी कर रहे थे, लेकिन इस सबके बावजूद अमेरिकी राष्ट्रपति की यह दलील बहुत दमदार नहीं लगती कि वह अमेरिका के खिलाफ किसी बड़ी साजिश को अंजाम दे रहे थे। यह मानने के अच्छे-भले कारण हैं कि अमेरिकी राष्ट्रपति ने अपने चुनावी अभियान को धार देने और इस्लामी जगत में ईरान विरोधी ताकतों को बल देने के लिए सुलेमानी को निशाना बनाया। निःसंदेह यह भी लगता है कि उन्होंने इस पर ज्यादा विचार-विमर्श करने की जरूरत नहीं समझी कि उनकी इस कार्रवाई का असर क्या होगा?

यह तय है कि यदि ईरान ने अमेरिकी हितों को नुकसान पहुंचाने की कोई कोशिश की तो अमेरिकी राष्ट्रपति भी चुप बैठने वाले नहीं हैं। वह पहले से ही ईरान को चेताने के साथ यह बताने में लगे हुए हैं कि अमेरिकी सेनाओं के संभावित लक्ष्य क्या होंगे? पश्चिम एशिया में अपना दबदबा बढ़ाने में जुटे ईरान के अनैतिक तौर-तरीकों की तरफदारी नहीं की जा सकती, लेकिन अमेरिकी राष्ट्रपति सत्ता में आने के बाद से ही जिस तरह उसको अस्थिर करने में लगे हुए हैं उसे भी सही नहीं कहा जा सकता। गैर जिम्मेदाराना हरकत करने वाले देशों से निपटने की अमेरिका की रीति-नीति जिम्मेदार राष्ट्र के अनुकूल नहीं। अमेरिकी प्रशासन में जिम्मेदारी का यह अभाव ट्रंप के राष्ट्रपति बनने के बाद से और अधिक बढ़ा ही है। ट्रंप ने जिस आधार पर कासिम सुलेमानी को निशाना बनाना जरूरी समझा उससे बड़े आधार तो पाकिस्तानी सेना के जनरलों के खिलाफ मौजूद हैं। जब अनगिनत अमेरिकी अधिकारियों के साथ खुद राष्ट्रपति ट्रंप इस सच को स्वीकार कर चुके हैं कि पाकिस्तानी सेना तालिबान एवं हक्कानी नेटवर्क सरीखे आतंकी संगठनों को पाल-पोस रही है तब फिर यह सवाल तो उठेगा ही कि आखिर अमेरिकी ड्रोन पाकिस्तानी जनरलों को क्यों नहीं देख पा रहे हैं?

# पलायन पर अंकुश

उत्तराखंड को अलग राज्य बने 19 साल पूरे हो चुके हैं। इस वक्फे में राज्य ने कई क्षेत्रों में प्रगति की, विकास के नए आयाम जोड़े, लेकिन कुछ क्षेत्र ऐसे हैं, जिन्हें लेकर चिंता यथावत है। इन्हीं में से एक है पलायन। अलग राज्य बनने के बावजूद उत्तराखंड में स्वास्थ्य, शिक्षा और सड़कों की स्थिति में बड़ा बदलाव न होने से पलायन को बढ़ावा मिला। उस पर रोजगार की कमी ने इसकी रफ्तार को और तेज किया। पर्वतीय क्षेत्रों में खेती फायदेमंद नहीं और उद्योगों के लिहाज से रोजगार सृजन की कोई उम्मीद नहीं। यही वजह रही कि बेहतर शिक्षा और रोजगार की तलाश में राज्य में सबसे ज्यादा पलायन हुआ। अब मौजूदा सरकार ने इस दिशा में पलायन आयोग का गठन कर पहल की है तो राज्य से लगातार हो रहे पलायन पर लगाम की उम्मीदें जगी हैं। इसके साथ ही रिवर्स पलायन के जरिये सरकार पलायन का दंश झेल रहे उत्तराखंड को नई दिशा दिखाने की कोशिश भी कर रही है। रिवर्स पलायन, यानी जो लोग सालों पहले तमाम कारणों से अपनी जड़ों से दूर चले गए, अब वापस पहाड़ लौटकर उनकी सोच, उनके विचारों को अमलीजामा पहनाकर सरकार राज्य को फिर आबाद और सरसब्ज करने की योजना पर कार्य कर रही है। ऐसे लोगों से सरकार फीडबैक लेगी। यह इसलिए ताकि अन्य लोगों को भी अपने गांवों को लौटने को प्रेरित किया जा सके और इनके बूते गांवों के विकास का खाका खींचा जा सके। इस कड़ी में आगामी मार्च महीने में पलायन आयोग उन लोगों का सम्मेलन आयोजित करने जा रहा है, जिन्होंने रिवर्स पलायन की मिसाल पेश कर तरक्की की इबारत लिखी है। दरअसल पलायन उत्तराखंड को सामाजिक, आर्थिक और साथ ही सामरिक दृष्टि से भी काफी नुकसान पहुंचा रहा है। पलायन की गंभीर स्थिति इससे समझी जा सकती है कि राज्य में 1702 गांव अब तक पूरी तरह निर्जन हो चुके हैं, जबकि ऐसे गांवों की भी बड़ी संख्या है, जहां कहनेभर को लोग रह गए हैं। मसलन वहां एक-दो लोग ही रह गए हैं। इसके बावजूद इसका एक सकारात्मक पक्ष भी है। अब ऐसे लोग आगे आ रहे हैं, जो देश के महानगरों से वापस अपनी जड़ों को लौटे और खुद का रोजगार खड़ा कर उस धारणा को तोड़ने का काम कर रहे हैं, जिसमें कहा जाता है कि पहाड़ में कुछ नहीं हो सकता। अब सरकार ने ऐसे लोगों के अनुभवों का लाभ उठाने का निर्णय लिया है। उम्मीद की जानी चाहिए कि इन लोगों के सुझाव लेकर सरकार ऐसी कार्ययोजना तैयार करेगी, जिससे पहाड़ में ही लोगों को बेहतर रोजगार के साथ ही स्वास्थ्य और शिक्षा जैसी मूलभूत सुविधाएं भी उपलब्ध हो सकेंगी।

# पश्चिम एशिया में उबाल का असर

**विवेक काटजू**

सुलेमानी की हत्या से आक्रोशित ईरान अमेरिका के खिलाफ कार्रवाई जरूर करेगा, पर किसी बड़े युद्ध की आशंका नहीं है। तेल के दाम जरूर प्रभावित हो सकते हैं

तीन जनवरी की सुबह बगदाद हवाई अड्डा परिसर में ईरान के मेजर जनरल कासिम सुलेमानी की हत्या कर दी गई। ड्रोन हमले के जरिये हुई यह हत्या अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप के आदेश पर हुई। इससे ईरान में आक्रोश की लहर दौड़ गई। दुनिया भर में शिया समुदाय इससे कुपित हो गया। आखिर इस पूरे घटनाक्रम के क्या निहितार्थ हो सकते हैं और यह वैश्विक परिदृश्य को किस प्रकार प्रभावित कर सकता है।

इसकी पड़ताल के लिए हमें सबसे पहले ईरान के राष्ट्रीय एवं सामरिक जीवन में सुलेमानी की हैसियत को समझना होगा। सुलेमानी ईरान के रिवॉल्यूशनरी गार्ड्स की अल कुद्स इकाई के प्रमुख थे। इस पद पर उन्हें बीस साल से अधिक हो गए थे। रिवॉल्यूशनरी गार्ड्स का मुख्य मकसद 1979 में अयातुल्ला खुमैनी के नेतृत्व में हुई इस्लामिक क्रांति के मूल्यों एवं उद्देश्यों का संरक्षण करना है। इसके अंदरूनी दस्ते इस्लामिक क्रांति के आंतरिक दुश्मनों का सफाया करते आए हैं। वहीं बाहरी दस्ता विदेशी दुश्मनों से निपटता है। सुलेमानी की अगुआई वाला अल कुद्स बाहरी दस्ता है। वह बीते दो दशकों से इस्लामिक क्रांति के ढांचे को ध्वस्त करने की अमेरिकी कोशिशों का मजबूती से प्रतिरोध कर रहे थे। वहीं शिया ईरान पर प्रभुत्व कायम करने के सुन्नी अरब देशों के प्रयासों का भी उन्होंने पुरजोर तरीके से मुकाबला किया। सुलेमानी ने पश्चिम एशिया और दुनिया के अन्य देशों में भी शिया समुदाय को संगठित करने की कोशिश की। उनमें ईरान के प्रति सहानुभूति के भाव को बनाए रखने और बढ़ाने में अहम भूमिका निभाई।

यहां यह भी याद दिलाना होगा कि ईरान में निर्वाचित सरकार तो है जिसका नेतृत्व राष्ट्रपति करते हैं, लेकिन निर्णायक शक्ति सुप्रीम लीडर के हाथ में होती है। 1989 में अपनी मृत्य तक अयातुल्ला खुमैनी इस पद पर काबिज रहे। उनके बाद शिया धर्मगुरुओं ने अयातुल्ला खामनेई को इस गद्दी पर बैठाया। रिवॉल्यूशनरी गार्ड्स सुप्रीम लीडर के प्रति उत्तरदायी हैं और उनके इशारे पर ही काम करते हैं। इस लिहाज से सुलेमानी खामनेई के बहुत करीबी तो थे ही, वहीं उन्होंने अपने जज्बे, काबिलियत और दिलेरी से ईरानी शियों के साथ-साथ दुनिया भर के शिया समुदाय में गहरी पैठ बनाई। इसीलिए उनकी हत्या पर इतनी तीखी प्रतिक्रिया देखने को मिल रही है। सुलेमानी शिया जगत के नायक थे तो अमेरिका और सुन्नी अरब देशों की आंखों में वह हमेशा खटकते रहे। इसका यह तात्पर्य नहीं कि सुलेमानी की अल कुद्स और अमेरिकी खुफिया एजेंसियों में कभी सहयोग नहीं रहा। उन्होंने इराक में आइएस जैसे साझा दुश्मन के खिलाफ साथ में मुहिम भी चलाई, लेकिन कभी भी दोनों पक्षों ने इसे सार्वजनिक रूप से स्वीकार नहीं किया। यह विरोधाभासी स्थिति आपको सामरिक संबंधों की जटिलताओं का आभास करा सकती है।

चूंकि यह मामला ही अमेरिकी राष्ट्रपति के इशारे पर घटित हुआ तो अमेरिका से इसका सरोकार होना स्वाभाविक है। अमेरिका की कमान संभालने के बाद से ही राष्ट्रपति ट्रंप ने अपने पूर्ववर्ती बराक ओबामा की ईरान नीति को सिरे से पलट दिया। पहले तो वह परमाणु करार से पीछे हटे और फिर उस पर तमाम प्रतिबंध लगाने के साथ ही सुन्नी अरब देशों का साथ दिया। उन्होंने अपनी यह मंशा कभी नहीं छिपाई कि वह पश्चिम एशिया में ईरान का कद घटाना चाहते हैं। उन्होंने साफ कहा कि वह ईरान की मुश्किलें बढ़ाएंगे और उसे आर्थिक रूप से कमजोर करेंगे। यहां तक कि ईरान के क्रांतिकारी ढांचे और धार्मिक गुरुओं के नेतृत्व वाली प्रणाली को खत्म करने की अपनी इच्छा को भी उन्होंने नहीं छिपाया। उन्होंने ईरान की जनता को भी इसके लिए उकसाया।

इसके साथ ही ट्रंप ने अमेरिकी जनता को भी यह दिखाने का प्रयास किया कि जहां ओबामा की ईरान नीति कमजोर थी वहीं उनके नेतृत्व में पश्चिम एशिया में अमेरिकी हित पूरी तरह सुरक्षित हैं। सुलेमानी को लेकर लिया गया उनका फैसला इसकी बड़ी मिसाल है। यहां हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि घरेलू स्तर पर ट्रंप विपक्षी डेमोक्रेट पार्टी का भारी विरोध झेल रहे हैं जिसने हाल में अपने बहुमत वाली अमेरिकी प्रतिनिधि सभा में उनके खिलाफ महाभियोग की प्रक्रिया आगे बढ़ाई। इस साल अमेरिका में राष्ट्रपति चुनाव भी होने हैं। इससे ट्रंप अमेरिकी जनता को याद दिलाना चाहते हैं कि वह डेमोक्रेट राष्ट्रपति जिमी कार्टर की तरह कमजोर नहीं हैं। याद दिला दें कि चालीस साल पहले कार्टर के कार्यकाल में ही तेहरान स्थित अमेरिकी दूतावास को ईरानियों ने ध्वस्त कर दिया था। इतना ही नहीं उन्होंने 52 अमेरिकी राजनयिकों को 400 दिन तक बंधक बनाकर भी रखा। इस पूरे घटनाक्रम के दौरान कार्टर लाचार ही बने रहे। इसके उलट ट्रंप ने अपने दबंग तेवर अमेरिकी जनता को दिखा दिए कि बगदाद स्थित अमेरिकी दूतावास पर हमले के कथित आरोपी सुलेमानी को ठिकाने लगाने में जरा भी वक्त जाया नहीं किया गया। ट्रंप की सोच की पुष्टि उनके ट्वीट से जाहिर है कि सुलेमानी की हत्या के खिलाफ अगर ईरान ने कोई दुस्साहस किया तो वह ईरान के 52 ठिकानों को निशाना बनाने से गुरेज नहीं करेंगे। यहां 52 का प्रतीक इसलिए महत्वपूर्ण है कि ईरानियों ने 52 अमेरिकी राजनयिकों को 400 दिनों तक ही बंधक बनाकर रखा था।

इससे इन्कार नहीं किया जा सकता कि ईरान की जनता और विश्व के शिया समुदाय के कई वर्ग अब दबाव डाल रहे हैं कि ईरान सुलेमानी की हत्या का बदला ले। प्रश्न यह है कि ईरान के समक्ष विकल्प क्या हैं? प्रतिबंधों के चलते उसकी आर्थिक स्थिति डांवाडोल है। ईरानी नेता यह भी जानते हैं कि ट्रंप कई पहलुओं की परवाह नहीं करेंगे। यदि घरेलू राजनीतिक हितों और पश्चिम पश्चिमी एशियाई सुन्नी देशों में अमेरिकी साख को कायम रखने के लिए ईरान पर बड़ा हमला करना पड़ा तो भी वह गुरेज नहीं करेंगे। इसलिए संभवतः ईरान के नेता कुछ न कुछ कार्रवाई तो करेंगे, लेकिन वह सीमित दायरे में ही रहेगी। हां, यह जरूर कि इससे दुनिया में बेचैनी बढ़ेगी और तेल बाजार पर कुछ असर पड़ सकता है, लेकिन इससे ज्यादा असर का अनुमान अतिरेक ही होगा।

ट्रंप ने भारत को भी इसमें घसीटने का प्रयास किया कि सुलेमानी दिल्ली से लेकर लंदन तक आतंकी घटनाओं के पीछे थे। भारत सरकार ने इस पर कोई प्रतिक्रिया नहीं देकर एकदम सही किया। भारत के पश्चिम एशिया में व्यापक हित जुड़े हैं। लाखों भारतीय कामकाज के सिलसिले में इन देशों में रहते हैं। भारत की ऊर्जा जरूरत भी इन देशों पर निर्भर है। ऐसे में भारत के लिए इस क्षेत्र में शांति एवं स्थायित्व बहुत जरूरी है। भारत ने दोनों देशों से संयम बरतने की अपील की है, जो सही है, लेकिन भारत सरकार यह जानती है कि अमेरिका और सुन्नी अरब देशों में उसके विशेष हित हैं जिनकी रक्षा भी जरूरी है। इसलिए भारतीय कूटनीति को संभलकर कदम उठाना होगा। साथ ही पारंपरिक नीति पर भी कायम रहना होगा कि पश्चिम एशिया के आंतरिक मसलों से भारत दूर रहे और द्विपक्षीय संबंधों को आगे बढ़ाने पर जोर दे।

(लेखक विदेश मंत्रालय में सचिव रहे हैं)
**response@jagran.com**

# संदर्भ-प्रसंग को देखने की जरूरत

**हृदयनारायण दीक्षित**

'हम देखेंगे' नज्म में फैज का मकसद सही हो सकता है। मगर इसका सहारा लेने वाले सीएए विरोधियों की क्या मंशा थी?

WHY ARE STUDENTS PROTESTING BECAUSE THEY ARE EDUCATED
LAAZIM HAI KI HUM BHI DEKHENGE

काव्य, गीत या नज्म निरपेक्ष नहीं होते। वे भावप्रवण होते हैं। प्रत्येक सृजन का विशेष संदर्भ और देशकाल भी होता है। प्रेमी या प्रेमिका के लिए लिखी गई नज्म या कविता, भाई या बहन के लिए औचित्यपूर्ण नहीं हो सकती। सृजन कर्म अपने समय और प्रसंग में ही उचित होते हैं। लघु या दीर्घ अवधि के बाद वे कालसंगत नहीं रह जाते। संप्रति पाकिस्तानी शायर फैज अहमद फैज की एक नज्म 'लाजिम है कि हम भी देखेंगे' को लेकर विवाद है। जामिया मिल्लिया इस्लामिया में नागरिकता संशोधन कानून के विरोध में उग्र प्रदर्शन हुआ था। इसमें कथित पुलिस ज्यादती के विरोध में आइआइटी कानपुर में छात्र प्रदर्शन हुआ। इस प्रदर्शन में भड़काऊ नारों के साथ फैज की नज्म पढ़ी गई। आइआइटी प्रशासन ने इस मामले में जांच समिति बनाई है। जांच समिति को लेकर एक वर्ग में उबाल है। एक नामचीन शायर ने आइआइटी को औकात बताई है, 'यह शायरी है, इसका फैसला गालिब, मीर, तुलसी, कबीर के वंशजों को करने दीजिए। आप इंजीनियर पैदा कर सकते हैं, शायर नहीं।' लेकिन सच दूसरा है। शायरी का फैसला अवाम ही करती है। अच्छा हो कि नज्म के आंदोलन में प्रयोग के औचित्य का निर्णय जनसामान्य भी करें।

फैज पाकिस्तान में रहते थे। वह विचार से वामपंथी थे। पाक की इस्लामी हुकूमत से स्वाभाविक ही उनकी नहीं पटी। वह उत्पीड़ित भी किए गए। फैज ने यह नज्म पाक के सैन्य शासक जियाउल हक के विरोध में लिखी थी। आश्चर्य कि कम्युनिस्ट विचारधारा से संबद्ध होने के बावजूद फैज ने इस्लामी आस्था वाले 'अंतिम दिन' को नज्म का विषय बनाया। नज्म के अनुसार 'सब बुत उठाए जाएंगे/ सब ताज उछाले जाएंगे/ बस नाम रहेगा अल्लाह का।' इस्लामी एकेश्वरवाद में बुत या मूर्ति पूजा को गलत बताया गया है। भारत में आए इस्लामी हमलावरों ने मूर्ति और मंदिर गिराए थे। शायरों ने फैज की तरफदारी में 'बुत' का मतलब समझाया है-'बुत का मतलब है सनम या महबूब। पत्थर की मूरत जिसकी सूरत इंसान जैसी। वे लोग जो अपने आपको पत्थर की तरह चुपचाप खड़ा रखते हैं। रावण का पुतला बुत है जिसे नफरत का प्रतीक मानकर जलाया जाता है। नफरत फैलाने वाले का बुत गिरा दिया जाता है।' यहां सवाल लाजिम है कि तब श्रीराम, श्रीकृष्ण एवं शिव के बुत क्यों गिराए गए थे?

बहस में तमाम शायर कूद गए हैं। एक गीतकार ने आइआइटी द्वारा जांच समिति बनाने को भी हास्यास्पद बताया है। इसका अर्थ यह हुआ कि कोई प्रतिष्ठित संस्था आंदोलन और तोड़फोड़ के समय इस्तेमाल शब्द, नारे या भड़काऊ सामग्री की जांच भी नहीं कर सकती। क्या वामपंथी पाकिस्तानी शायर होने के कारण ही जांच की घोषणा हास्यास्पद हो सकती है? कुछ समय पहले केंद्रीय विद्यालयों की प्रार्थना 'असतो मा सद्गमय' को हिंदू धार्मिक बताकर सुप्रीम कोर्ट में चुनौती दी गई थी। वृहदारण्यक उपनिषद् की इस स्तुति में असत् से सत्, अंधकार से प्रकाश एवं मृत्यु से अमरत्व की प्रार्थना है। कोर्ट ने इसकी सुनवाई से इन्कार नहीं किया। न्यायिक सुनवाई संवैधानिक व्यवस्था का अंग है। आइआइटी कानपुर ने जांच के आदेश देकर कोई 'कुफ्र' नहीं किया है। सांप्रदायिक सोच-विचार गलत है। एक शायर ने मामले को गलत दिशा में ले जाने की कोशिश भी की है। कहा है कि अगर यही नज्म फैज के बजाय रामधारी सिंह दिनकर या हरिवंशराय बच्चन की होती तो इस पर कोई हंगामा न होता। इस टिप्पणी को सही मानें तो नज्म पर जांच और विवाद की वजह फैज का मुसलमान होना है, लेकिन ऐसी सोच गलत है।

फैज के पैरोकारों ने खुद नज्म को जियाउल हक की सैन्य तानाशाही के विरोध में बताया है। यही सच भी है। तब जेहन में कई सवाल उठते हैं। मसलन क्या भारत में सैन्य तानाशाही है? नज्म तानाशाही से लड़ने की प्रेरणा देती है? क्या भारत में लोकतांत्रिक मौलिक अधिकारों का प्रयोग आमजन के लिए सुलभ नहीं है? भारत में हिंसा करने वालों के भी मानवाधिकारों के पक्षधर प्रतिष्ठित हैं। नागरिकता संशोधन कानून केआक्रामक विरोध-प्रदर्शनों से फैज की नज्म का संदर्भ आखिरकार क्या है? क्या यहां जियाउल हक के अत्याचारों जैसे कोई प्रसंग हैं? आंदोलन के संचालक या फैज की इस नज्म की दाद देने वाले कृपया देश को बताएं कि यह नज्म किस मकसद से पेश की गई थी? नज्म के हिंदू विरोधी होने या न होने की बात अलग है। यहां नज्म के विरोध की बात नहीं है। प्रसंग, संदर्भ के अनुसार यह औचित्य का ही मूलभूत प्रश्न है कि पाकिस्तानी धरती पर सैन्य तानाशाह के विरोध में लिखी नज्म का भारत में विधि स्थापित लोकतांत्रिक सरकार के विरुद्ध जारी आंदोलन से क्या संबंध है?

'वंदे मातरम्' भारत का राष्ट्रगीत है। इसमें भारत की धरती का यशोगान है। इसमें किसी पंथ, मजहब या धर्म की निंदा नहीं है। स्वाधीनता आंदोलन में यह लोकजागरण का गीत था। कांग्रेस के काकीनाडा अधिवेशन में मौलाना जौहर अली ने इसका विरोध किया। फिर इसका विरोध सांप्रदायिक फैशन हो गया। इसे इस्लाम विरोधी बताने वाले तत्वों ने शब्दों के गलत अर्थ निकाले थे। भारतीय भाषाओं में अल्लाह का अर्थ ईश्वर है, लेकिन नज्म विवाद में अल्लाह का अर्थ न्याय बताया जा रहा है। कुरान (सूरा 112, आयत 1-4) में 'वह यकता है। निरपेक्ष है, सर्वाधार है। उसका कोई समकक्ष नहीं है।' तब उसका अर्थ न्याय कैसे हो सकता है। बेशक वह सर्वोच्च न्यायी हो सकता है। वंदे मातरम् गीत में प्रयुक्त शब्दों के भी सही अर्थ नहीं निकाले गए। इसके विरुद्ध फतवा भी आया था।

फैज की नज्म में शब्दों के अर्थ गूढ़ या रहस्यवादी नहीं हैं। 'राज करेगी खल्क-ए-खुदा' का मतलब क्या सेक्युलर राज्य है? कुछ शायर या बुद्धिजीवी नज्म के अपने मतलब निकाल रहे हैं। उन्हें ध्यान देना चाहिए कि प्रत्येक शब्द के अर्थ की सार्वजनिक स्वीकृति भी होती है। शब्द बुरे या अच्छे नहीं होते। असली बात है मकसद। नज्म में फैज का मकसद सही हो सकता है। विचारणीय प्रश्न यह है कि क्या आंदोलनकारियों का मकसद शायरी का मजा लेना ही था? या कुछ और? क्या पाक लफ्जों के लिबास में नापाक मंसूबे नहीं हो सकते? इसी की जांच हो जाने में क्या बुराई है?

(लेखक उत्तर प्रदेश विधानसभा के अध्यक्ष हैं)
**response@jagran.com**

## ऊर्जा

### धर्म और अध्यात्म

धर्म का अनुसरण तो सभी करते हैं, लेकिन अधिसंख्य लोग इस बात को नहीं जानते हैं कि इसी का सही अनुसरण उन्हें अध्यात्म की उन गहराइयों तक ले जाता है जहां पहुंचकर मानव को अपने वास्तविक स्वरूप और शक्ति का अनुभव होता है। सभी धर्म ईश्वर तक पहुंचने के विभिन्न मार्गों का उल्लेख करते हैं। इसके लिए बस थोड़े से समर्पण की भावना को विकसित करना होता है। ऐसा अहसास उन लोगों को भी प्राप्त होता रहता है जो पूजा स्थल पर नहीं जाते हैं, लेकिन दूसरों के प्रति सदैव अच्छी भावना बनाए रखते हैं। जीवन में प्राप्त होने वाली यही संतुष्टि जब लंबे समय तक मस्तिष्क में अनुभव होती है तब यह मस्तिष्क की गहराइयों की ओर बढ़कर यहां स्थायित्व लाती है।

सामान्य स्थिति में हर मानव के अंतःकरण में विभिन्न भाव उत्पन्न होते हैं, लेकिन ये भाव इतने शक्तिशाली नहीं होते हैं कि दैवीय शक्ति तक पहुंचने में सफल हो जाएं। यही कारण है कि लोगों की आवाज ईश्वरी शक्ति तक नहीं पहुंच पाती है। हर धर्मग्रंथ में ऐसे भावों को उत्पन्न करने की तकनीक का वर्णन किया गया है, लेकिन अधिकांश लोग इसकी ओर ध्यान नहीं देते हैं। ऐसा नहीं है कि वे इस तकनीक को नहीं समझते हैं, लेकिन इसका अनुसरण इसलिए नहीं करते हैं, क्योंकि इसके अंतर्गत अच्छे कर्मों का किया जाना भी शामिल रहता है, जिन्हें करने से ऐसे लोग प्रायः कतराते हैं।

अच्छे कर्मों का तात्पर्य समर्पित भाव से संपूर्ण ईश्वरी व्यवस्था के प्रति भावनात्मक झुकाव होता है जिसमें अपने स्वयं के हित को नजरअंदाज कर दूसरों के हित को प्राथमिकता दी जाती है। जो लोग ऐसा करते रहते हैं उनके हृदय में निश्चित ही ऐसी भावनाओं का जन्म होने लगता है जो उन्हें ऐसे कार्य के प्रति और भी अधिक प्रेरित करती रहती हैं। ऐसा करते रहने में व्यक्ति में स्वयं की संतुष्टि का स्तर बढ़ता ही रहता है जो एक दिन उसे जीवन की ऊंचाइयों पर ले जाने में पूरी तरह से सक्षम होता है। हर धर्म ग्रंथ का निचोड़ एक ही है कि संपूर्ण मानवता के प्रति आपसी प्रेम का विस्तार हो।

वीके जायसवाल

# पाक का अल्पसंख्यक विरोधी चेहरा

**अरविंद जयतिलक**

ननकाना साहिब पर हमले की घटना ने पाकिस्तान के अल्पसंख्यक विरोधी चेहरे को फिर दुनिया के सामने ला दिया है

पाकिस्तान स्थित सिखों के पवित्र धर्मस्थल ननकाना साहिब गुरुद्वारे पर उपद्रवियों की भीड़ द्वारा हमला यह रेखांकित करने के लिए पर्याप्त है कि पाकिस्तान में सिख समुदाय और उनके पवित्र स्थल सुरक्षित नहीं हैं। ननकाना साहिब पर हमले की घटना न सिर्फ पाकिस्तान के अल्पसंख्यक विरोधी चेहरे को दुनिया के सामने ला दिया है, बल्कि भारत में नागरिकता संशोधन कानून का विरोध कर रहे लोगों की भी बोलती बंद कर दी है। उपद्रवियों का दुस्साहस ही कहा जाएगा कि उन्होंने ननकाना साहिब का नाम बदलकर गुलाम-ए-मुस्तफा करने की धमकी दी। इस घटना के बाद पाकिस्तान कह रहा है कि ननकाना साहिब में कहीं कुछ नहीं हुआ, लेकिन उसके पास इस बात का जवाब नहीं कि सब कुछ सामान्य है तो फिर ननकाना साहिब में नगर कीर्तन करने पर पाबंदी क्यों है? उचित होता कि पाकिस्तान झूठ बोलने के बजाय उपद्रवियों की जमात को भड़काने वाले मोहम्मद हसन और उसके साथियों को गिरफ्तार कर उसके खिलाफ सख्त कार्रवाई करता।

ध्यान देना होगा कि यह वही मोहम्मद हसन है जिसने गुरुद्वारे के ग्रंथी की बेटी का अपहरण और उसका जबरन धर्म परिवर्तन करवाकर निकाह करवा दिया। अब जब सिख समुदाय विरोध जता रहा है तो प्रतिक्रिया स्वरूप ननकाना साहिब को निशाना बनाया जा रहा है। याद होगा दो माह पहले 12 नवंबर को गुरुनानक देव की 550वीं जयंती के उत्सव पर पाकिस्तान के प्रधानमंत्री इमरान खान ने कितनी बढ़-चढ़कर बात की थी। करतारपुर गलियारा खोलने के फैसले को ऐतिहासिक बताते हुए पाकिस्तान में अल्पसंख्यकों और उनके पवित्र स्थलों की सुरक्षा का दावा किया था। अब उनसे पूछा जाना चाहिए कि ननकाना साहिब पर हमला किस तरह अल्पसंख्यकों और उनके पवित्र स्थलों की सुरक्षा की गारंटी है।

सच तो यह है कि पाकिस्तान ने अल्पसंख्यकों और उनके पवित्र स्थलों को मिटाने का अभियान चला रखा है। यह पर्याप्त नहीं कि भारत में नागरिकता संशोधन कानून का विरोध कर रहे सियासी दल पाकिस्तान के धर्म विरोधी आचरण की निंदा कर चुप्पी साध लें। उचित होगा कि वहां से आए अल्पसंख्यकों को दी जाने वाली नागरिकता का सम्मान करें।

यह पहली बार नहीं है जब पाकिस्तान में अल्पसंख्यकों पर अत्याचार की बानगी दुनिया के सामने आई है। आजादी के बाद ही पाकिस्तान ने अल्पसंख्यकों को मिटाने का फैसला कर लिया था, जबकि 1947 में भारत विभाजन के उपरांत पाकिस्तान के संस्थापक मोहम्मद अली जिन्ना ने अपने पहले भाषण में कहा था कि 'हमें अपने व्यवहार और विचार से अल्पसंख्यकों को यह जता देना चाहिए कि हम उनकी जिम्मेदारी उठाने को तैयार हैं और उन्हें चिंता करने की जरूरत नहीं है।' लेकिन पाकिस्तान की हुकूमत जिन्ना के वादे पर खरा नहीं उतारी। ननकाना साहिब पर हमले से साफ है कि पाकिस्तान अपने अल्पसंख्यकों की सुरक्षा और उनकी प्रतिष्ठा की रक्षा में विफल है। यही कारण है कि वहां के अल्संख्यक लगातार पलायन कर रहे हैं।

(लेखक स्वतंत्र टिप्पणीकार हैं)

## एकपक्षीय दृष्टिकोण

कपिल सिब्बल का आलेख असल मुद्दों से ध्यान भटकाने की कोशिश कई विरोधाभासों से ग्रस्त है। कुछ स्थानों पर तो लेखक का दृष्टिकोण अतिवादी भी हो गया है। उदाहरण के लिए उन्होंने भारत की बुनियाद के लिए हिंदुत्व को एक अभिशाप बता दिया है, जबकि सच्चाई यह है कि भारत की बुनियाद में ही हिंदुत्व है, जो 'वसुधैव कुटुंबकम' और 'सर्वे भवंतु सुखिनः' की विराट अवधारणा पर आधारित है। हमारे वेदों और उपनिषदों में उस समय मानवता के गीत गाए गए हैं, जब रोम की सभ्यता की एक ईंट तक न रखी गई थी। हमारा समाज मूलतः सर्वसमावेशी और समतामूलक ही है। हां, यह सही है कि कालांतर में समाज के कुछ लोगों के ऊपर कुछ हद तक अपात्रताएं थोपे जाने के प्रमाण हैं, लेकिन इस तथ्य को भी वामपंथी इतिहासकारों ने बढ़ा-चढ़ाकर लिखा और बताया। लेख में जिस 'बदरंग आर्थिक परिदृश्य' के लिए मोदी सरकार की आलोचना की गई है, उसमें कालिख पोतने का काम यूपीए सरकारों, विशेषकर यूपीए-2 के समय ही किया गया था, जब अर्थव्यवस्था को गति देने के नाम पर अंधाधुंध कर्ज बांटे गए। कितने आश्चर्य की बात है कि 1947 से 2008 तक सरकारी बैंकों द्वारा कुल 18 लाख करोड़ के लोन बांटे गए थे, जबकि 2008 से 2014 के बीच मात्र छह वर्षों में ही नियम-कानूनों को ताक पर रखते हुए करीब 34 लाख करोड़ रुपये के लोन बांट दिए गए, जिसका एक बड़ा भाग एनपीए हो गया। यदि वर्तमान सरकार के ठोस आर्थिक निर्णयों की वजह से यह एनपीए इस साल 7.27 लाख करोड़ के स्तर तक आ पाया है, जो पिछले चार वर्षों में न्यूनतम है तो इसके लिए वर्तमान सरकार की सराहना ही की जानी चाहिए। लेखक का यह दावा भी सही नहीं है कि

## मेलबाक्स

मोदी सरकार की विभाजनकारी नीतियों के विरोध में देशभर के लोग सड़कों पर उतर रहे हैं। संभव है कि विरोध और हिंसा करने वाले लोग, जो संख्या में मुट्ठी भर ही हैं, उनका शोर अधिक हो, लेकिन देश की अधिसंख्यक जनता मोदी सरकार की नीतियों के साथ है।

चंदन कर्ण, देवघर

## आग की घटनाएं

आपदा प्रबंधन एक ऐसा मामला है जिसमें हमारी सरकार और देश को बहुत कुछ करने की जरूरत है। चाहे प्राकृतिक आपदा हो या मनुष्य के द्वारा खड़ी की गई, हम दोनों से निपटने में विफल हैं। जिस तरह से लगातार एक के बाद एक आग लगने की घटनाओं ने दिल्ली को झकझोर रखा है ऐसे में एनडीएमसी का कदम अत्यंत सराहनीय है। इसके लिए 10 करोड़ के बजट के सही इस्तेमाल के लिए एनडीएमसी को अन्य कई देशों से सलाह भी लेनी चाहिए जो इस तरह की आपदाओं को सही से निपटने में माहिर हैं, ताकि करदाताओं के पैसे का सही इस्तेमाल हो। स्कूल के बच्चों और नागरिकों को प्रशिक्षण देना बहुत जरूरी है कि कैसे उनको ऐसी आपदा की स्थिति में क्या करना है और क्या नही करना है। इस पूरी प्रक्रिया में कई हितधारक हैं जैसे कि राज्य सरकार, नगर निगम, स्वयं सेवी संस्थाएं इत्यादि। सभी को मिलकर काम करने की जरूरत है और इसके लिए राजनीति को दर किनार करने की जरूरत है। आपदा बिना बताए आती है और हम सबको सदैव इसके लिए तैयार रहने की जरूरत है।

बाल गोविंद, सेक्टर 44, नोएडा

## महिला आरक्षण बिल

दैनिक जागरण के 2 जनवरी के अंक में प्रकाशित स्मृति ईरानी के लेख, गलत धारणाओं पर चुप्पी तोड़ें, में महिला माहवारी सुरक्षा को बहुत ही अच्छे ढंग से उठाया गया है। लेकिन उन्होंने महिला आरक्षण बिल को लेकर पूरे लेख में मौन धारण कर लिया, जो कि ठीक नहीं कहा जा सकता है। यदि आज के हालात पर गौर करें तो केवल 78 महिला सांसद ही देश की संसद में प्रतिनिधित्व करती हुई नजर आती हैं, जो कि कुल सदस्य संख्या का केवल 14 फीसद है। आधी आबादी कही जाने वाली महिलाओं का जनप्रतिनिधित्व इन 14 फीसद महिलाओं के हाथ में ही है। ऐसे में महिला अधिकारों व उन पर हो रहे अत्याचारों की चिंता परंपरागत रूप से पुरुष प्रधान संसद ही करती आ रही है। अब जैसा कि नूतन वर्ष 2020 महिला सशक्तीकरण का घोषित वर्ष है और सरकार भी पूर्ण बहुमत, पूरी निष्ठा और पूरे दृढ़ संकल्प के साथ आगे बढ़ रही है। ऐसे में संसद में महिलाओं की संख्या बढ़ाने की बात भी होनी चाहिए।

पवन कुमार मुरली, गुरुग्राम

**इस स्तंभ** में किसी भी विषय पर राय व्यक्त करने अथवा दैनिक जागरण के राष्ट्रीय संस्करण पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए पाठकगण सादर आमंत्रित हैं। आप हमें पत्र भेजने के साथ ई-मेल भी कर सकते हैं।

**अपने पत्र इस पते पर भेजें :**
दैनिक जागरण, राष्ट्रीय संस्करण,
डी-210-211, सेक्टर-63, नोएडा
ई-मेल : mailbox@jagran.com

संस्थापक-स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त. पूर्व प्रधान संपादक-स्व.नरेन्द्र मोहन. संपादकीय निदेशक-महेन्द्र मोहन गुप्त. प्रधान संपादक-संजय गुप्त, जागरण प्रकाशन लि. के लिए: नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग, रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित और उन्हीं के द्वारा डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा से मुद्रित, संपादक (राष्ट्रीय संस्करण) -विष्णु प्रकाश त्रिपाठी*
दूरभाष : नई दिल्ली कार्यालय : 011-43166300, नोएडा कार्यालय : 0120-4615800, E-mail: delhi@nda.jagran.com, R.N.I. No. DELHIN/2017/74721 * इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ही होंगे। हवाई शुल्क अतिरिक्त।